



## 4

### वैदिक काल

पिछले पाठ में आपने हड़प्पा सभ्यता के बारे में पढ़ा। हड़प्पा के लोग पूरी तरह से व्यवस्थित नगरों में रहते थे और उनकी व्यापारिक और शिल्पकारी संबंधी कार्यविधियाँ बहुत व्यवस्थित थीं, उनकी एक लिपि भी थी, परन्तु अभी तक हम उसे पढ़ नहीं पाए हैं। परन्तु 1900 ई. पू. के आसपास इन नगरों का पतन शुरू हो गया था। इसके पश्चात अनेक ग्रामीण बस्तियों का उदय हुआ। इन ग्रामीण बस्तियों में अनेक तत्त्व थे, जो हड़प्पा कालीन सभ्यता की निरंतरता दर्शाते थे। इसी कालावधि के दौरान हड़प्पा के क्षेत्रों के आसपास की बाहरी सीमाओं में आर्य या इंडो आर्य नाम के नए लोगों के भारत में प्रवेश के पुरातात्विक साक्ष्य मिलते हैं। इस पाठ में हम उन परिस्थितियों की जानकारी प्राप्त करेंगे, जिनके कारण इन नए लोगों ने प्रवेश किया और यह जानने का भी प्रयास करेंगे कि वैदिक साहित्य में इनकी सभ्यता के संबंध में इनकी किन-किन मुख्य विशेषताओं का उल्लेख मिलता है।



#### उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात आप :

- वैदिक ग्रन्थों और उसकी विषय-वस्तु की जानकारी दे सकेंगे;
- आर्यों के बारे में जानकारी दे सकेंगे और जहाँ से वे स्थानांतरित हुए उन क्षेत्रों को पहचान सकेंगे;
- प्रारंभिक वैदिक काल (1500 ई.पू.-1000 ई.पू.) और उत्तर वैदिक काल (1000 ई. पू.-600 ई.पू.) के लोगों के निवास स्थलों को पहचान सकेंगे;
- लोहे से बनी चीजों के महत्त्व का उल्लेख कर सकेंगे, जिसका प्रयोग उत्तर वैदिक काल में शुरू हुआ; और
- 1000 ई.पू. से 600 ई.पू. की कालावधि के बाद शुरू होने वाली अवधि के दौरान वैदिककालीन लोगों की आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक संरचनाओं और संस्थानों में हुए परिवर्तनों को पहचान सकेंगे।



आपकी टिप्पणियाँ

## 4.1 वैदिक साहित्य

वेद क्या है? 'वेद' विद् धातु से लिया गया है, जिसका अर्थ है 'जानना'। 'वेद' शब्द का अर्थ है वेद साहित्य के रूप में जाने वाले वैदिक साहित्य में निहित पवित्र ज्ञान। वैदिक साहित्य की संपूर्ण ग्रन्थावली में दो प्रकार की पुस्तकें शामिल हैं। ये हैं—'मन्त्र' और 'ब्राह्मण'। मन्त्र वर्ग की ग्रन्थावली वैदिक ग्रन्थों की प्रमुख ग्रन्थावली है, जिसमें चार पथक ग्रन्थ शामिल हैं—ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद। ब्राह्मण ग्रन्थों को ब्राह्मणीय वर्ग मानने की भूल न करें। वास्तव में गद्य रूप में लिखे गए ग्रन्थ हैं, जिनमें मंत्रों की परिभाषाओं के विस्तार हैं, जिनमें बलिदान संबंधी कर्मकाण्ड भी हैं। ब्राह्मण सहित चारों वेदों में उपलब्ध साहित्य को 'श्रुति' कहते हैं, जिसे प्रत्यक्ष रूप में ऋषियों से सुना गया था। आरण्यक (शाब्दिक अर्थ है जंगल संधि पत्र) और 'उपनिषद्' (पास में ही नीचे बैठना) मुख्य रूप से ब्राह्मण ग्रन्थों के परिशिष्ट हैं। इन्हें वेदान्त (वेदों का अन्त) भी कहा जाता है और इनमें दार्शनिक विचार—विमर्श हैं।

'ऋग्वेद' 1028 मंत्रों का संकलन है, जिसे 10 मण्डलों में बाँटा गया है। ये प्रारंभिक रचनाएं हैं, अतः इनमें भारत के वैदिक कालीन लोगों के प्रारंभिक जीवन का उल्लेख किया गया है। 'सामवेद' काव्य पदों का संकलन है, जो अधिकतर ऋग्वेद से लिए गए हैं—और इन्हें काव्यात्मक रूप दिया गया है ताकि इन्हें गाया जा सके। यजुर्वेद दो रूप में मिला है, श्याम (क ष्ण) और शुक्ल (सफेद) और इनमें सार्वजनिक और व्यक्तिगत रूप में किए जाने वाले अनुष्ठानों का विवरण है। 'अथर्ववेद' जादुई तंत्रों और मंत्रों का संग्रह है, जिनका प्रयोग भूत-प्रेतों को भगाने और रोगों के उपचार के लिए किया जाता था।

वैदिक साहित्य के गहन अध्ययन से पता चलता है कि वैदिक ग्रन्थ साहित्यिक दृष्टि से सामाजिक और सांस्कृतिक विकास के दो चरणों के क्रमिक विकास की जानकारी देते हैं। 'ऋग्वेद' जो कि प्राचीनतम ग्रन्थ है, सामाजिक और सांस्कृतिक विकास के एक चरण की जानकारी देता है तो अन्य तीन वेद दूसरे चरण के विकास क्रम की जानकारी देते हैं। प्रथम चरण को ऋग्वैदिक काल या प्रारंभिक वैदिक काल कहते हैं और उसके बाद के चरण को उत्तर वैदिक काल कहते हैं। प्रारंभिक वैदिक काल ऋग्वैदिक मंत्रों की रचना का काल है। 1500 ई.पू. से 1000 ई.पू. के कालखंड को इस कालावधि में रखा गया है। उत्तर वैदिक काल की अवधि 1000 ई.पू. से 600 ई.पू. मानी गई है। हाल ही में संयुक्त राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को) द्वारा 'ऋग्वेद' को विश्व मानव धरोहर के साहित्य में शामिल किया गया है।



### पाठगत प्रश्न 4.1

- 1 'वेद' शब्द से आप क्या समझते हैं?
- 2 वैदिक ग्रन्थों में से कौन-से ग्रन्थों को मंत्रों की श्रेणी में रखा गया है? उनका उल्लेख करें?



3. 'श्रुति' कहे जाने वाले साहित्य की श्रेणी में किस प्रकार के ग्रन्थ हैं? उनका उल्लेख करें?

---

4. 'ब्राह्मण' श्रेणी के ग्रन्थों की विषय-वस्तु का विस्तृत विवरण दें?

---

5. 'वेदान्त' शब्द को परिभाषित करें?

---

## 4.2 आर्यों का स्थानांतरण

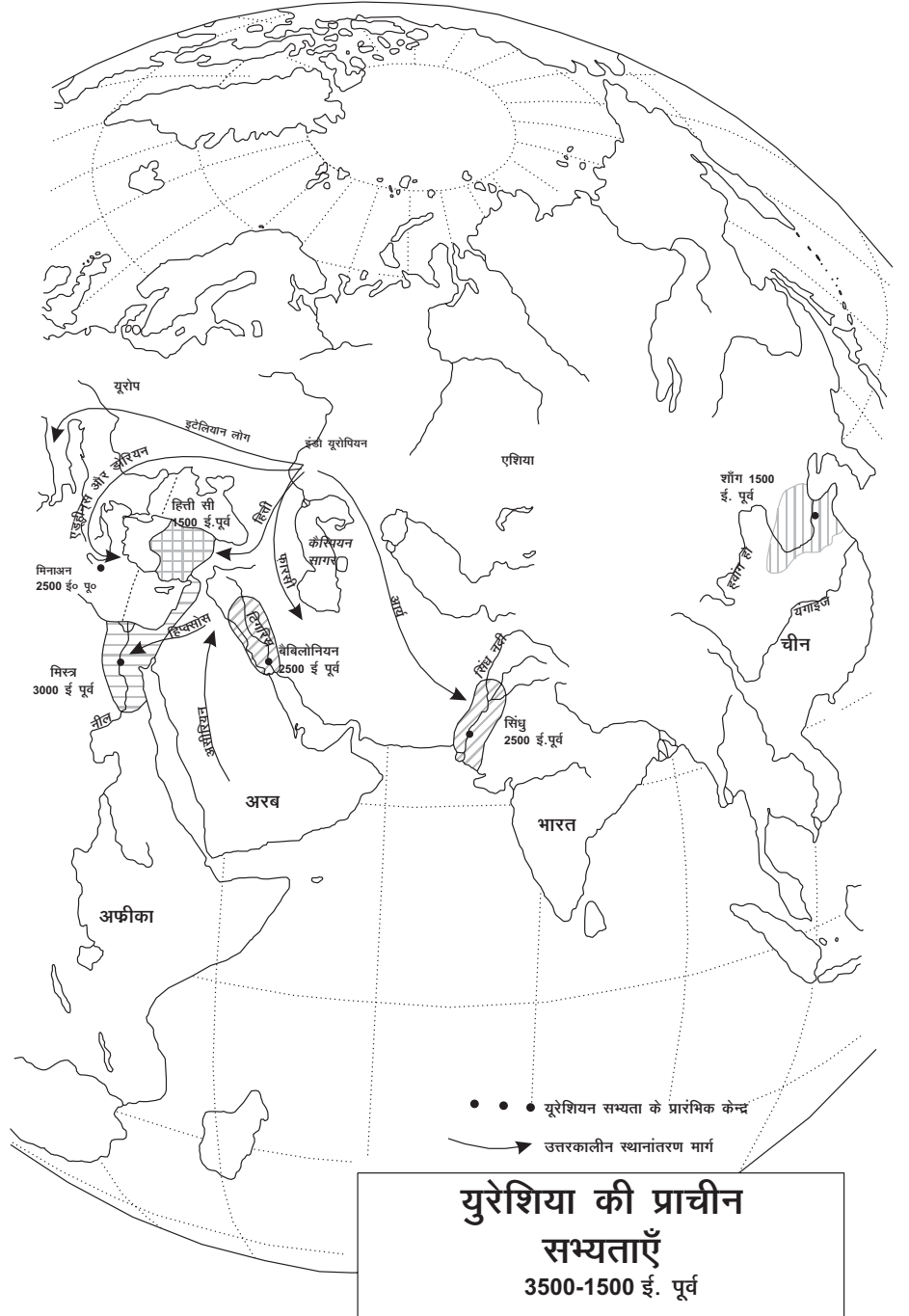
वेद मंत्रों के लेखक आर्य हैं। 19वीं सदी में आर्यों को एक वंश माना जाता था, परन्तु अब इन्हें ऐसे भाषायी समूह के लोगों के रूप में माना जाता है, जो इंडो-यूरोपियन भाषा बोलते थे और उस भाषा से बाद में संस्कृत, लैटिन और ग्रीक इत्यादि भाषाओं का जन्म हुआ। इसकी जानकारी इन भाषाओं के शब्दों से मिलती है, जिनकी ध्वनि और अर्थ समान हैं। अतः संस्कृत शब्द 'मात्' और 'पित्' लैटिन शब्द मातर और पितर से मिलते हैं। इसी प्रकार 'इनार' शब्द जो कि हिती (तुर्की) भाषा से है वेदकाल के 'इन्द्र' शब्द के समान हैं। 'सूरय्यास' और 'मारुत्तश' शब्द जो कस्साइट (मैसोपोटामिया) के शिलालेखों में मिले हैं वेदकालीन 'सूर्य' और 'मारुत' के समान हैं।

माना जाता है कि आर्य लोग मूलतः दक्षिणी रूस से मध्य एशिया के बीच फैले घास के मैदानों (स्टेप्स) में रहते थे। यहाँ से आर्यों के एक समूह ने भारत के उत्तर-पश्चिम में प्रवेश किया और इन्हें इंडो-आर्यन अथवा केवल आर्यों के नाम से पुकारा जाने लगा। स्थानांतरण के पुरातात्विक साक्ष्यों से पता चलता है कि ये स्थानांतरित लोग दक्षिणी साइबेरिया स्थित एन्डोनोवो सभ्यता से आए थे। यह सभ्यता दो सहस्राब्दि ई.पू. काल में विकसित हुई थी। यहाँ से ये लोग हिन्दुकुश के उत्तर (जिसे बैक्ट्रिया मार्जियाना आर्कियोलोजिकल कॉम्प्लेक्स कहा जाता था) की ओर अग्रसर हुए और वहाँ से इन्होंने भारत में प्रवेश किया। इस काल में यानी 1900 ई.पू. से 1500 ई.पू. के दौरान इन क्षेत्रों से हमें घोड़ों, आयु पहियों, अग्नि की उपासना और शवदाह के साक्ष्य मिले हैं, और ये सब चीजें बाद में भारत में आर्यों के जीवन का प्रमुख भाग रहीं। इनके अतिरिक्त कलाकृतियाँ और मिट्टी के बर्तनों के अवशेषों से भी यही संकेत मिलते हैं कि लोग मध्य एशिया से दक्षिणी एशियाई क्षेत्रों की ओर स्थानांतरित हुए। परन्तु कुछ विद्वान अभी भी इस तर्क पर बहस करते हैं कि आर्य भारत के स्वदेशी लोग थे और किसी बाहरी स्थान से भारत में नहीं आए।

नए लोग कई हजार वर्षों की अवधि के दौरान अनेक समूहों में भारत आए। इस अवधि में देशज आबादी और बाहर से आए नए लोगों में परस्पर कार्यकलाप चलते रहे। परस्पर कार्यकलापों की प्रक्रिया के परिणामस्वरूप एक मुख्य बात यह हुई कि आर्यों की वैदिक किस्म की भाषा संपूर्ण उत्तर भारत क्षेत्र की प्रमुख भाषा बन गई। इस भाषा में रची गई प्रचलित पुस्तकें, जिनका उल्लेख ऊपर किया गया है, वैदिक साहित्य हैं।



आपकी टिप्पणियाँ



मानचित्र 4.1 युरेशिया की प्राचीन सभ्यताएँ



**पाठगत प्रश्न 4.2**

1. आप कैसे जानते हैं कि संस्कृत, लैटिन, ग्रीक, हिती (हैटाइट) और कैस्साइट भाषाएँ एक ही भाषायी समूह से संबंधित हैं?



2. आर्यों के स्थानांतरण के पुरातात्विक साक्ष्य कहाँ से प्राप्त हुए हैं?

---

3. वे कौन-से स्थान हैं, जिन्हें आर्य सभ्यता की विशेषताओं वाले क्षेत्रों के रूप में पहचाना गया है?

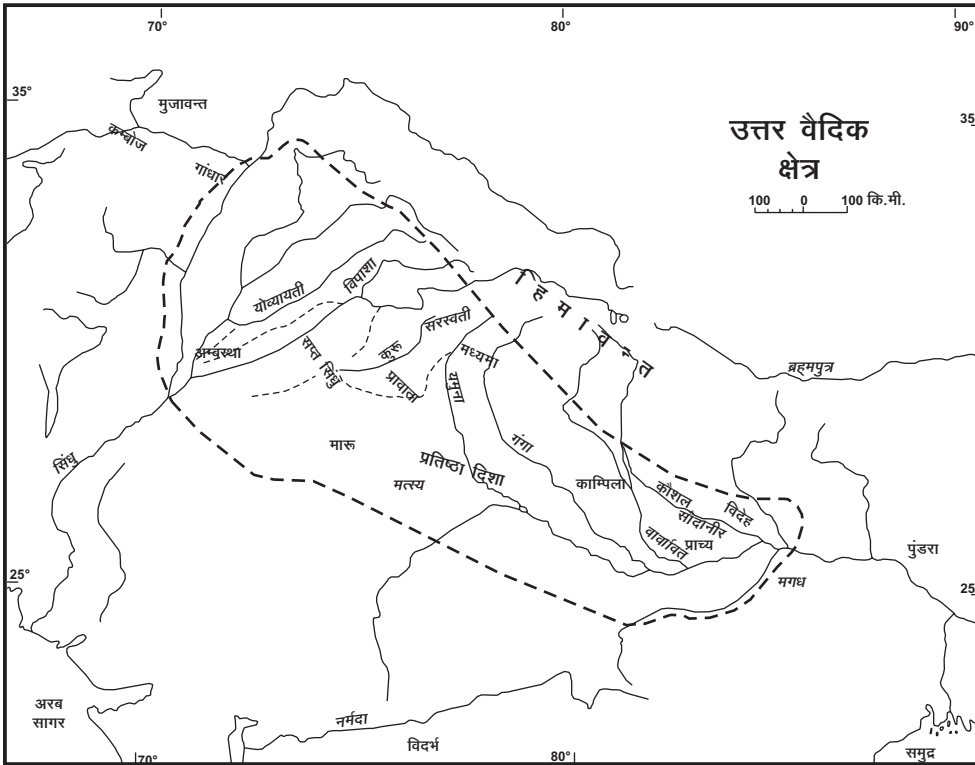
---

4. आर्य सभ्यता के प्रमुख स्थलों का उल्लेख करें?

---

### 4.3 वैदिक आर्यों का भौगोलिक विस्तार क्षेत्र

प्राचीन आर्य लोग 'सप्त-सिंधु' नाम के क्षेत्र में रहते थे, जिसका अर्थ है सात नदियों वाला क्षेत्र। यह क्षेत्र मुख्यतया दक्षिण एशिया के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र से लेकर यमुना नदी तक के क्षेत्र में फैला है। सात नदियों में शामिल हैं, सिंधु, वितस्ता (झेलम), असिकनी (चिनाब), परुशनी (रावी), विपाशा (व्यास), शतद्रु (सतलुज) और सरस्वती। इस क्षेत्र में ऋग्वैदिक काल के लोगों ने निवास किया, युद्ध लड़े, अपने और अन्य पशुओं के झुंडों को चराया पशुओं को घरेलू पालतू जानवर बनाया। धीरे-धीरे पूर्व दिशा की ओर बढ़ते हुए उत्तर वैदिक काल में वे उत्तर प्रदेश (कौशल) और बिहार (विदेह) में पहुंचे। यहाँ आकर वे ऐसे लोगों के संपर्क में आए, जो उनसे भिन्न भाषाएँ बोलते थे और बहुत लम्बे समय से इस क्षेत्र में निवास कर रहे थे।



मानचित्र 4.2 उत्तर वैदिक क्षेत्र



आपकी टिप्पणियाँ



### पाठगत प्रश्न 4.3

1. 'सप्तसिंधु' में शामिल सात नदियों के नाम लिखें?  
\_\_\_\_\_
2. उत्तर वैदिक काल में आर्य किस क्षेत्र के लोगों के संपर्क में आए?  
\_\_\_\_\_

### 4.4 प्रारंभिक वैदिक अर्थव्यवस्था

प्राचीन वैदिक आर्य लोग पशुपालक थे। पशुपालन उनका मुख्य व्यवसाय था। ये दूध, मांस और चमड़ा प्राप्त करने के लिए गाय, भैंस, भेड़ें, बकरियां और घोड़े पालते थे। ऋग्वेद में मिले साहित्यिक साक्ष्यों के विश्लेषण से हमें इनके साक्ष्य मिले हैं। 'गौ' शब्द से अनेक शब्दों का उद्भव हुआ, जिसका अर्थ है गाय। धनी व्यक्ति को 'गोमत' कहते थे और बेटी को 'दुहित्री' जिसका अर्थ है, जो गाय का दूध दुहती है। 'गवेषणा' शब्द का शाब्दिक अर्थ है गायों की खोज करना, परन्तु इस शब्द का अर्थ लड़ाई भी है, क्योंकि पशुओं के कारण अनेक लड़ाइयां भी लड़ी गई थीं। गायों को संपूर्ण इच्छाएँ पूरी करने वाली कामदा समझा जाता था। पशुओं की संख्या में वृद्धि के लिए प्रार्थनाएँ की जाती थीं। ऊपर उल्लिखित संदर्भों और इसके साथ ही अन्य अनेक संदर्भों से ये संकेत मिलते हैं कि ऋग्वैदिक काल के आर्यों के लिए घरेलू पशुपालन सबसे महत्वपूर्ण आर्थिक गतिविधि थी।

परन्तु इसका मतलब यह नहीं है कि प्रारंभिक वैदिक काल के लोगों को खेती-बाड़ी का ज्ञान नहीं था। पशु चराने के कार्यों की तुलना में खेती-बाड़ी करने के साक्ष्य बहुत कम मिलते हैं और लगता है ये संदर्भ प्रायः बाद में जोड़े गए हैं। कुछेक संदर्भों से यह पता चलता है कि उन्हें कृषि की जानकारी थी और अपनी भोजन संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए वे खेती करते थे। ये 'यव' उगाते थे (आधुनिक जौ या बालें), जिसका अर्थ खाद्यान्नों की जाति की फसलों के लिए प्रयुक्त किया जाता था।

पशु पालन और लघु-स्तर पर खेती-बाड़ी करने के अतिरिक्त वे अनेक अन्य आर्थिक कार्यकलाप भी करते थे। शिकार, बड़ईगिरी, रंगाई, कपड़ों की बुनाई, रथ बनाना और धातुओं को गला कर ढलाई के काम इत्यादि जैसे कुछ अन्य काम भी थे, जो वे करते थे। इन कार्यों के द्वारा बनाए गए उत्पादों को वे वस्तुओं की अदला-बदली के काम में लाते थे। परन्तु, वस्तु-विनियम का सबसे पसंदीदा माध्यम थी, गायें। बलियों के अनुष्ठानों के उपरान्त ब्राह्मण पुजारियों को गायें, घोड़े और सोने के गहने शुल्क के रूप में मिलते थे।



### पाठगत प्रश्न 4.4

1. प्राचीन वैदिक आर्यों के व्यवसाय का वर्णन करें?  
\_\_\_\_\_



2. कुछ उदाहरण देकर, पशुपालन के महत्त्व को रेखांकित करें?  
\_\_\_\_\_
3. प्राचीन आर्यों के जीवन में कृषि का क्या महत्त्व था? विस्तार से लिखें।  
\_\_\_\_\_
4. प्राचीन आर्यों में कौन-सी आर्थिक गतिविधियाँ प्रचलित थीं? एक सूची बनाएँ।  
\_\_\_\_\_
5. प्राचीन वैदिक काल के दौरान परस्पर विनिमय प्रणाली का वर्णन करें?  
\_\_\_\_\_

#### 4.5 उत्तर वैदिक काल में आए परिवर्तन

उत्तर वैदिक काल में कृषि, वैदिक लोगों का मुख्य व्यवसाय बन गया थी। खेती-बाड़ी की प्रक्रिया शुरू करने के लिए अनेक धार्मिक अनुष्ठान प्रारंभ किए गए थे। इसमें यह भी कहा गया कि हल चलाने के लिए छह और आठ जोड़े बैल जोते जाएं। भैंसे को खेती के उद्देश्य से घरों में पाला जाता था। दलदली भूमि पर हल चलाने के लिए यह पशु बहुत ही उपयोगी था। इन्द्र देवता को इस काम में नया उपनाम दिया गया था 'कृषि का देवता'। पौधों से उगाए जाने वाले खाद्य पदार्थों की संख्या में काफी वृद्धि हुई। जौ के अतिरिक्त अब ये लोग गेहूँ, चावल, दालों, मसूर, ज्वार-बाजरा, गन्ने इत्यादि की खेती करते थे। पका हुआ चावल 'दान-दक्षिणा' की चीजों में शामिल था। इस प्रकार खाद्य उत्पादों की शुरुआत के बाद कृषि के उत्पादनों को धार्मिक अनुष्ठानों में दान किया जाने लगा था। तिल, जिसमें से सर्वाधिक खाद्य वनस्पति-तेल निकाला जाता था, धार्मिक कर्मकांड में प्रयोग किया जाने लगा था।

उत्तर वैदिक काल में आर्य सभ्यता के विस्तार का एक मुख्य तत्त्व, 1000 ई.पू. के आस-पास लोहे के प्रयोग की शुरुआत होना था। ऋग्वैदिक काल के लोग 'अयस' नाम की जिस धातु से परिचित थे वह शायद 'तांबा' या 'कांसा' रही होगी। उत्तर वैदिक काल में 'अयस' के साथ 'श्याम' या 'कृष्ण' का विशेषण जोड़ा गया, जिसका अर्थ था 'काला' और इसे लोहे के संकेतक के रूप में जाना जाता था। पुरातात्विक साक्ष्यों से पता चला है कि लोहे का प्रयोग 1000 ई.पू. के आसपास आरंभ हुआ था, जिसे उत्तर वैदिक साहित्य का काल माना जाता है।

भारत के उत्तरी और पूर्वी भागों में, भारत के उत्तर-पश्चिमी भागों से अधिक वर्षा होती थी, जहाँ बाद में आर्य लोग स्थानांतरित हुए थे। वर्षा के परिणामस्वरूप यह क्षेत्र घने जंगलों से भरा था, जिनका सफाया ऋग्वैदिक काल के लोगों द्वारा प्रयोग किए जाने वाले तांबे या पत्थर के औजारों से होना संभव नहीं था। घने वर्षा वनों का अच्छे ढंग से सफाया करने के लिए लोहे के औजारों ने बहुत सहायता की, खास तौर पर जलावन के बाद बचे पेड़ों के बड़े-बड़े टूटों को पहले की तुलना में कम समय में विस्तृत जंगली भू-भागों को कृषि योग्य भूमि में परिवर्तित किया जा सकता था। लोहे के हल से गहरी मिट्टी की जुताई की जा सकती थी ताकि भूमि को उपजाऊ बनाया जा सके। ऐसी संभावना है कि यह प्रक्रिया ऋग्वैदिक काल के उत्तर काल में प्रारंभ हो गई थी, परन्तु लोहे से बने औजारों और उपकरणों के प्रयोग करने के प्रभावों के साक्ष्य उत्तर वैदिक काल के अंतिम चरण में ही ज्ञात हुए।



आपकी टिप्पणियाँ

उत्तर वैदिक काल के दौरान क षि आधारित अर्थव्यवस्था के विस्तार से जनसंख्या में लगातार वृद्धि होती गई। चित्रकारी किए गए सुरमई रंग के बर्तनों (पी.जी. डब्ल्यू.) की संख्या और आकार बढ़ने के अवशेष मिलने के कारण दोआब क्षेत्रों की आबादी बढ़ने के साक्ष्य मिलते हैं। समय बीतने के साथ-साथ वैदिक लोगों को मौसमों, खाद और सिंचाई की बेहतरीन जानकारी भी हासिल हो गई थी। इन सभी विकासों के परिणामस्वरूप उत्तर वैदिक काल के अंतिम चरण में कुछ स्थलों, जैसे हस्तिनापुर और कौशांबी में वास्तविक रूप में विस्तार हुआ। इन स्थलों में धीरे-धीरे नगरों की विशेषताएं विकसित होनी शुरू हो गई थीं। ऐसे अर्धविकसित नगर जहां मुख्तः श्रेष्ठि राजकुमार, पादरी और कारीगर रहते थे, उनकी आबादी का भरण-पोषण किसान लोग करते थे, जो अपनी इच्छा या बिना इच्छा से अपने अनाज उन्हें देते थे।



#### पाठगत प्रश्न 4.5

1. उत्तर वैदिक काल के दौरान कौन-कौन से प्रमुख आर्थिक कार्यकलाप थे?  
\_\_\_\_\_
2. क षि का महत्त्व बढ़ने के साथ-साथ आर्यों के जीवन में कौन-से परिवर्तन आए?  
\_\_\_\_\_
3. 'क षि देवता' किसे कहा जाता था?  
\_\_\_\_\_
4. 'तिल' को धार्मिक अनुष्ठानों में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण क्यों समझा जाता है?  
\_\_\_\_\_
5. उत्तर वैदिक काल में लोहे के बने उपकरणों के प्रयोग से क षि में क्या सहायता मिली?  
\_\_\_\_\_
6. चित्रित सुरमई बर्तन प्रयोग करने वाले स्थलों के आकार बढ़ने के पीछे क्या कारण थे?  
\_\_\_\_\_

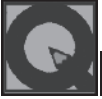
#### 4.6 प्रारंभिक वैदिक समाज

ऋग्वैदिक समाज की मूलभूत इकाई परिवार थी। यह पिता प्रधान समाज था और विवाह की परंपरा थी। एक पत्नीव्रत धर्म था परन्तु श्रेष्ठिजन कभी-कभी अनेक पत्नियां भी रखते थे। बालिग होने पर ही शादियां होती थीं और विवाह के बाद पत्नी पति के घर में जाती थी। परिवार एक विशाल समूह का हिस्सा होता था, जिसे 'विस' या 'वंश' कहते थे। एक से अधिक वंशों के समूह को 'जन' या 'जाति' कहा जाता था। 'जन' सबसे बड़ी सामाजिक इकाई थी। एक वंश के लोग परस्पर रक्त संबंधों से जुड़े होते थे। किसी जाति के सदस्य बनने का आधार उस जाति में जन्म लेना था न कि किसी विशेष क्षेत्र में निवास होना। इस तरह भरत जाति के लोगों को भारत कहा जाता था। इसमें किसी प्रकार के





क्षेत्र की कोई भूमिका नहीं थी। ऋग्वैदिक समाज बहुत ही साधारण और आम तौर पर 'सामंतावादी' समाज था। इसमें किसी प्रकार का जातीय वर्गीकरण नहीं था। व्यवसाय जन्म पर आधारित नहीं थे, बल्कि परिवार के विभिन्न सदस्य अलग-अलग व्यवसाय कर सकते थे। परन्तु उस काल में कुछ भिन्नताएं अवश्य मौजूद थीं। आर्यों और अनार्यों में वर्ण या रंग भिन्नता का आधार था। आर्य लोग गौर-वर्ण के थे, जबकि गैर-आर्य (अनार्य) देशज लोग सांवले रंग के थे और अलग भाषा का प्रयोग करते थे। अतः ऋग्वेद में 'आर्य वर्ण' और 'दास वर्ण' का उल्लेख मिलता है। यहाँ 'दास' शब्द का उपयोग उस समूह के लोगों के लिए दिया गया है, जो ऋग्वैदिक लोगों से अलग थे। बाद में 'दास' का अर्थ गुलाम (सेवक) के रूप में रूढ़ हो गया। इसके अतिरिक्त कुछ अन्य चीजें भी चलन में थीं, जैसे प्रमुख व्यक्तियों और पुजारियों के हाथों में युद्ध में लूटे माल का बड़ा हिस्सा हाथ लगने के परिणामस्वरूप उत्तर वैदिक काल में जाति के भीतर ही कुछ असमानताएँ पनप गई थीं। ऋग्वैदिक जाति में क्षत्रिय, पुजारी (पंडित) और सामान्य व्यक्तियों के तीन वर्ग थे। 'शूद्र' वर्ग ऋग्वैदिक काल के अंत में ही अस्तित्व में आया। इसका मतलब है कि प्रारंभिक वैदिक काल में समाज का वर्गीकरण अत्यधिक कठोर नहीं था। ऋग्वेद की इस काव्य रचना से इसका संकेत मिलता है जिसका भावार्थ है : 'मैं एक कवि हूँ, मेरे पिता चिकित्सक हैं, और मेरी माता चक्की पर अन्न पीसती हैं, समृद्धि की कामना करते हैं, जिसके लिए हमारी विविध योजनाएँ हैं, हम पशुओं की तरह अपनी इच्छाएँ पूरी करते हैं। महिलाओं का समाज में बहुत ही सम्मानजनक स्थान था। उपयुक्त उम्र में उनका विवाह होता था और उन्हें अपनी पसंद का पति चुनने का अधिकार था। 'सभा' और 'समिति' जैसे संगठनों के कार्यों में भी वे भाग ले सकती थीं।



#### पाठगत प्रश्न 4.6

1. प्रारंभिक वैदिक काल में होने वाले विवाहों के बारे में विवरण दें?  
\_\_\_\_\_
2. क्या प्रारंभिक वैदिककालीन समाज समतावादी प्रवृत्ति का था? अपने उत्तर को कारण सहित प्रमाणित करें?  
\_\_\_\_\_
3. प्रारंभिक वैदिक समाज के वर्गीकरण का आधार क्या था?  
\_\_\_\_\_
4. प्रारंभिक वैदिक काल में असमानताएँ किस प्रकार से आईं?  
\_\_\_\_\_

#### 4.7 उत्तर वैदिक काल के सामाजिक परिवर्तन

परिवार अभी भी उत्तर वैदिक समाज की बुनियादी इकाई थी। तथापि इसके रचनात्मक ढाँचे में परिवर्तन आ गया था। उत्तर वैदिक कालीन परिवार काफी विशाल हो गए थे, जिन्हें संयुक्त परिवार कहा जाता था, जिसमें तीन या चार पीढ़ियों के लोग एक साथ एक ही परिवार में रहते थे। पश्चिमी उत्तर प्रदेश में अतरंजीखेड़ा और अहिच्छत्र में मिले चूल्हों



आपकी टिप्पणियाँ

की कतारों से पता चलता है कि यहाँ सामूहिक भोज के लिए या फिर विशाल परिवारों के लिए भोजन पकाया जाता होगा। गोत्र की संकल्पना भी इसी काल में विकसित हुई इसका अर्थ यह हुआ कि एक ही गोत्र के लोग एक ही वंशावली से थे और एक ही गोत्र के व्यक्तियों में परस्पर विवाह संबंध नहीं होते थे। यद्यपि बहुपति प्रथा भी प्रचलित थी, परन्तु एक पत्नी विवाह प्रथा को ही बेहतर समझा जाता था। इस काल के दौरान महिलाओं पर कुछ प्रतिबंध भी लगाए गए थे। एक ग्रन्थ में उल्लेख मिलता है कि नारी को जूए और मद्यपान की तरह व्यसन माना जाता था। एक अन्य ग्रन्थ में पुत्री को सभी दुखों के मूल के रूप में वर्णित किया गया है। महिला विवाह के बाद अपने पति के घर में रहती थी। सार्वजनिक सभाओं में महिलाओं की भागीदारी पर प्रतिबंध लगा दिया गया था।

तथापि सबसे बड़ा परिवर्तन था, 'वर्ण व्यवस्था' के रूप में समाज के वर्गीकरण का उद्भव और विकास। समाज को जिन चार वर्णों में बांटा गया था, वे थे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। इस काल में बलियों और धार्मिक कर्मकांड की बढ़ती संख्या ने ब्राह्मणों को बहुत ही शक्तिशाली बना दिया था। वे विभिन्न प्रकार के धार्मिक अनुष्ठान कराते थे, जिनमें कृषि से संबंधित कार्यकलापों के विभिन्न चरणों से संबद्ध अनुष्ठान भी सम्मिलित थे। इसकी वजह से वे बहुत ही महत्वपूर्ण समझे जाने लगे थे। इसकी अगली सामाजिक श्रेणी में आते थे 'क्षत्रिय' जो शासक वर्ग में थे। ब्राह्मणों के साथ मिलकर ये जीवन के सभी पक्षों पर नियंत्रण करते थे। 'वैश्य वर्ण' जो बहुत बड़ी संख्या में थे, कृषि कार्यों के साथ-साथ व्यापार और कारीगरी के काम भी करते थे। ब्राह्मण और क्षत्रिय, वैश्यों द्वारा दिए जाने वाले दान-दक्षिणा (उपहार और कर) पर निर्भर थे। 'शूद्र' अर्थात् चौथे वर्ण के लोग सामाजिक श्रेणी क्रम में सबसे निचले स्तर पर आते थे। उन्हें तीनों उच्च वर्णों की सेवा करने का आदेश दिया गया था। उन्हें उपनयन संस्कार (शिक्षा ग्रहण करने के लिए किया जाने वाला पवित्र यज्ञोपवीत संस्कार) जैसे धार्मिक कृत्यों का अधिकार नहीं था। अन्य तीनों वर्णों के लोगों को इस संस्कार की अनुमति थी और इसीलिए इन्हें 'द्विज' कहा जाता था जिसका सांकेतिक अर्थ है कि वे दो बार जन्म लेते थे (द्वि = दो, ज = जन्म लेना) इसे शूद्रों को कमजोर बनाने और धार्मिक कर्मकांड में बुराइयों की संकल्पना की शुरुआत के रूप में माना जा सकता है।

एक अन्य महत्वपूर्ण संस्था जिसने इस काल में रूप लेना प्रारंभ किया, वह थी 'आश्रम' व्यवस्था या जीवन की विभिन्न अवस्थाएँ। 'ब्रह्मचर्य' (विद्यार्थी जीवन), 'गृहस्थाश्रम' (घर में रहना), 'वानप्रस्थ' (वैराग्य) अवस्थाओं का वर्णन ग्रन्थों में मिलता है। बाद में 'संन्यास आश्रम' की चौथी अवस्था को भी जीवन में जोड़ा गया। वर्ण व्यवस्था के साथ इसे वर्णाश्रम धर्म का नाम दिया गया था।



#### पाठगत प्रश्न 4.7

1. उत्तर वैदिक कालीन परिवार की प्रकृति क्या थी?



2. 'गोत्र' शब्द से आप क्या समझते हैं?

\_\_\_\_\_

3. किन शब्दों से संकेत मिलता है कि शूद्रों को अशक्त बनाने का प्रारंभ हो रहा है?

\_\_\_\_\_

4. 'वर्णाश्रम धर्म' की व्याख्या करें?

\_\_\_\_\_

#### 4.8 प्रारंभिक वैदिक धर्म

शारीरिक सुरक्षा और सुख-समृद्धि की सामग्री प्राप्त करने के लिए देवताओं के समक्ष प्रार्थना - पूजा अर्चना ऋग्वैदिक काल के लोग प्रमुखता से करते थे। ऋग्वैदिक काल के देवता प्राकृतिक शक्तियों के विभिन्न रूप थे, जैसे वर्षा, तूफान, सूर्य इत्यादि। इन देवताओं के लक्षणों और विशेषताओं से भी यही प्रतिबिंबित होता है कि समाज का स्वरूप जनजातीय और पितृसत्तात्मक (पुरुष प्रधान) था, क्योंकि उनके ग्रन्थों में किसी देवी के अस्तित्व का उल्लेख नहीं मिलता। इन्द्र, अग्नि, वरुण, मित्र, द्यौ, पुष्य, यम, सोम इत्यादि सभी देवता पुरुष देव थे। इसकी तुलना में हमारे पास कुछ ही देवियाँ हैं, जैसे उषा, सरस्वती, पृथ्वी इत्यादि जिन्हें धर्म की व्याख्या में द्वितीय स्थान पर रखा गया है।

विभिन्न देवताओं के कार्यों से समाज में उनकी आवश्यकता का पता चलता है। अतः ऋग्वैदिक काल के लोग इन्द्र की युद्ध के देवता की तरह पूजा करते थे। ऋग्वेद में अनेक स्थानों पर इन्द्र देव का उल्लेख मिलता है। उसके हाथ में वज्र होता है और इन्हें मौसम के ऐसे देवता के रूप में भी पूजा जाता है, जो वर्षा लाते हैं। पवन देव मारुत, युद्धों में इन्द्र की उसी प्रकार सहायता करते थे, जैसे जनजातीय लोग जनजातीय युद्धों में अपने नायकों की सहायता करते थे। 'अग्नि देव' जो आग के देवता थे, उन्हें घर का देव मानते थे और उन्हें देवताओं और मनुष्य के बीच की कड़ी माना जाता था। सोम का संबंध पौधों और जड़ी-बूटियों के साथ था। 'सोम' एक ऐसा पौधा था, जिससे मादक रस निकाला जाता था। बलि दिए जाने के समय सोम रस का पान किया जाता था। 'वरुण' एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण देव थे, जिसे ब्रह्मांड का व्यवस्थापक माना जाता है, जिसे 'रीत' कहते थे। यह 'रीत' जनजातीय व्यवस्था का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष थी। पुष्य सड़कों, चरवाहों और पालतू पशुओं का देवता था। पशु चराने वाले खानाबदोशों के जीवन में इस देवता का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान रहा होगा। अन्य देवों का भी इसी प्रकार प्रकृति और जीवन के अन्य पक्षों से संबंध था।

इन सभी देवताओं का आह्वान किया जाता था और 'यज्ञों' या 'बलिदानों' के समय इनकी पूजा की जाती थी। इन बलियों की व्यवस्था जनजातियों के प्रमुख व्यक्तियों द्वारा की जाती थी और संपूर्ण कर्मकांड (ब्राह्मणों) पुजारियों द्वारा कराया जाता था। बलियाँ दिए जाने के समय जिन देवताओं का आह्वान किया जाता था, वे इन बलिदानों के फलस्वरूप युद्धों में विजय, संतानोत्पत्ति, पशु धन में वृद्धि और दीर्घायु का वरदान देते थे। इस कार्य में ब्राह्मणों को दान-दक्षिणा के रूप में बहुत बड़ी संख्या में उपहार मिलते थे। ध्यान देने की बात है कि संपूर्ण वैदिक काल के दौरान लोगों ने किसी मंदिर का निर्माण नहीं किया और न ही किसी प्रकार की मूर्ति की पूजा-अर्चना की।



आपकी टिप्पणियाँ



### पाठगत प्रश्न 4.8

1. किस आधार पर हम यह मानते हैं कि ऋग्वैदिक काल के देवताओं के लक्षणों से जनजातीय और पित सत्तात्मक समाज के स्वरूप का पता चलता है?  
\_\_\_\_\_
2. ऋग्वैदिक काल के 'इन्द्र देवता' की मुख्य विशेषताओं का वर्णन करें?  
\_\_\_\_\_
3. जनजातियों के प्रमुख 'यज्ञों' का आयोजन क्यों करते थे?  
\_\_\_\_\_
4. ऋग्वैदिक लोगों के लिए पुष्य देव का क्या महत्त्व था?  
\_\_\_\_\_
5. आग के देवता 'अग्नि देव' का क्या मुख्य कार्य था?  
\_\_\_\_\_

### 4.9 उत्तर वैदिक काल में हुए परिवर्तन

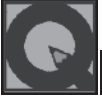
हमने पहले ही यह रेखांकित किया है कि उत्तर वैदिक काल में खेती-बाड़ी लोगों का मुख्य कार्य बन चुका था। भौतिक जीवन में आए परिवर्तनों के परिणामस्वरूप देवी और देवताओं के प्रति उनकी अभिरुचियों में भी परिवर्तन आया। स्थानीय अनार्य लोगों के साथ परस्पर लगातार लेन-देन ने भी इन परिवर्तनों में योगदान दिया। इस प्रकार 'विष्णु' और 'रुद्र' जो ऋग्वैदिक काल में कम महत्त्वपूर्ण देवता थे, अब बहुत ही महत्त्वपूर्ण देवता माने जाने लगे थे। तथापि हमें उत्तर वैदिक काल के किसी भी साहित्य में विभिन्न अवतारों या विष्णु के उन अवतारों का कोई संकेत नहीं मिलता, जिन से हम आज परिचित हैं।

उस काल की एक और महत्त्वपूर्ण विशेषता थी, बार-बार यज्ञ कराना और इनकी संख्या में वृद्धि और इन यज्ञों का समापन प्रायः बहुत बड़ी संख्या में पशु बलि दिए जाने से होता था। शायद इसका कारण था, ब्राह्मण वर्ग का बढ़ता महत्त्व और बदलते समाज में अपना प्रभुत्व बनाए रखने के लिए किए गए उनेक प्रयास। इन यज्ञों से ब्राह्मणों को बहुत बड़ी मात्रा में दान-दक्षिणा और सम्पदा मिलती थी। कुछ प्रमुख यज्ञ थे - 'अश्वमेध', 'वाजपेय' और 'राजसूय' यज्ञ इत्यादि। महाभारत और रामायण की गाथाओं में आपने इन यज्ञों के बारे में अवश्य सुना होगा। इन यज्ञों, जो कि कई दिनों तक चलते थे, इनके संपन्न होने पर उपहारों का अधिकांश हिस्सा ब्राह्मणों को मिलता था। इन यज्ञों को करने का दोहरा उद्देश्य था। प्रथम तो इनसे लोगों के ऊपर वर्चस्व स्थापित होता था और दूसरे राजनीतिक दृष्टि से विशिष्ट प्रादेशिक क्षेत्र में राजनीतिक महत्ता स्थापित होती थी, क्योंकि इन बलियों में संपूर्ण राज्य क्षेत्रों से लोगों को आमंत्रित किया जाता था।

आपको जानकर आश्चर्य होगा कि उत्तर वैदिक काल में इस पशुवध का विरोध होना शुरू हो गया था। बहुत बड़ी संख्या में पशुओं और अन्य जानवरों की यज्ञ के अन्त में बलि दिए जाने के कारण आर्थिक विकास में बाधा आती थी क्योंकि पशुपालन एक प्रमुख



व्यवसाय था। इसलिए वेदांत के उपनिषद कहे जाने वाले साहित्य में समृद्धि और कल्याण के लिए सद्व्यवहार और आत्म-त्याग की अनुशंसा की गई थी। उपनिषदों में भारतीय दर्शन के दो मूल सिद्धांत निहित हैं यानी कर्म और आत्मा का पुनर्जन्म लेना अर्थात् कर्मानुसार पुनः जन्म लेना। इन ग्रन्थों के अनुसार वास्तविक परमानन्द 'मोक्ष' यानी मानव को जन्म-मरण के आवागमन से मुक्ति मिलने पर मिलता है।



#### पाठगत प्रश्न 4.9

1. उत्तर वैदिक काल में बड़ी संख्या में यज्ञों में वृद्धि के क्या कारण थे?

---

2. यज्ञ आयोजित कराने के क्या उद्देश्य थे?

---

3. यज्ञों के महत्त्व के बारे में विस्तार से लिखें?

---

4. लोगों ने यज्ञ करवाने का विरोध करना क्यों शुरू कर दिया था?

---

#### 4.10 प्रारंभिक वैदिक राज्य व्यवस्था

ऊपर हमने उल्लेख किया है कि आर्यों की प्रमुख सामाजिक इकाई थी 'जन'। इस इकाई का प्रमुख राजनीतिक नेता होता था, जिसे 'राजन' कहते थे। इस प्रमुख का मुख्य काम था, जनता और पशुधन की शत्रुओं से रक्षा करना। अपने इस काम में उसकी सहायता करती थीं, जनजातीय संस्थाएँ जिन्हें सभा, समिति, विदिथा, गण और परिषद कहते थे। इन सबमें 'सभा' और 'समिति' सबसे महत्त्वपूर्ण संगठन थे। इन सभाओं में जीवन के सभी पक्षों पर विचार-विमर्श होता था। इनमें युद्ध, युद्धों में प्राप्त आय का वितरण, न्यायिक और धार्मिक कृत्य इत्यादि कुछ भी शामिल हो सकता था। इस प्रकार ये सभाएँ एक तरह से इन राजनीतिक प्रमुखों की शक्तियों को नियंत्रित करती थीं। दिलचस्प बात यह है कि महिलाएँ भी इन सभाओं और समितियों के विचार-विमर्श में भाग ले सकती थीं। प्रमुख का पद वंशानुगत नहीं था। आम तौर पर उसका चुनाव जनजाति करती थी। यद्यपि उसके उत्तराधिकारी उसी प्रमुख के परिवार से होने के संकेत मिलते हैं, परन्तु यह ज्येष्ठाधिकार (यानी सबसे बड़े पुत्र का पिता का स्थान ग्रहण करना) के नियम पर आधारित नहीं था। अनेक मामलों में पुरोहित मुखिया को परामर्श देता था। पुरोहित के अतिरिक्त कुछ सीमित संख्या में पदाधिकारी/कर्मचारी भी होते थे, जो मुखिया को दिन-प्रति-दिन के जनजातीय मामलों में सहायता करते थे। सेनानी, कुलापा, ग्रामणी इत्यादि कुछ कार्मिक थे, जिनके नामों का उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है। सेना स्थायी योद्धाओं का समूह नहीं था और इसमें योग्य जनजातीय व्यक्ति भी शामिल थे, जिन्हें केवल युद्ध के दौरान ही सक्रिय किया जाता था। 'तक्षण' यानी बढई और 'रथकार' यानी रथ-निर्माता, रथ बनाने की सरकारी जिम्मेदारी निभाते थे। कर संग्रह के लिए किसी भी कर्मचारी का उल्लेख नहीं मिलता है। लोग जो भी भेंट मुखिया को देते थे उसे 'बलि'



आपकी टिप्पणियाँ

कहते थे और यह आम जनजातीय लोगों द्वारा विशिष्ट अवसरों पर दिया जाने वाला स्वैच्छिक योगदान था। इससे यही दृष्टिगोचर होता है कि प्रारंभिक वैदिक कालीन राज्य व्यवस्था बिलकुल भी जटिल नहीं थी और सभी जनजातीय लोगों की सहायता और भागीदारी पर आधारित थी। परन्तु, उत्तर वैदिक काल में इस परिस्थिति में परिवर्तन आ गया था, जिसका परिचय आगे दिया जाएगा।



#### पाठगत प्रश्न 4.10

1. 'सभा' और 'समिति' के कार्यों का वर्णन करें?  
\_\_\_\_\_
2. 'राजन' का मुख्य काम क्या था?  
\_\_\_\_\_
3. प्रारंभिक वैदिक काल में 'बलि' की क्या प्रवृत्ति थी?  
\_\_\_\_\_
4. विविध मामलों में मुखिया के मुख्य कार्यकर्ताओं की सूची बनाएं?  
\_\_\_\_\_

#### 4.11 उत्तर वैदिक काल में आए परिवर्तन

उत्तर वैदिक काल के दौरान भौतिक और सामाजिक जीवन में आए परिवर्तनों का प्रभाव राजनीतिक क्षेत्र में आए परिवर्तनों पर भी पड़ा। प्रमुख नेता से लोगों का नियंत्रण ढीला पड़ने लगा और जिसके परिणामस्वरूप लोकप्रिय संस्थाएँ धीरे-धीरे समाप्त हो गईं।

मुखिया का पद वंशानुगत पिता के बाद पुत्र बन गया था। इस काल के साहित्य में उल्लेख मिलता है कि लोगों में धारणा थी कि राजा का पद दैवीय होता है। ब्राह्मणों ने मुखियाओं को इस प्रक्रिया में सहायता की। 'वाजपेय' और 'राजसूय' जैसे राज्याभिषेक के विस्तृत धार्मिक कर्मकांड 'मुखिया' का प्राधिकार स्थापित करते थे। जैसे-जैसे मुखिया की शक्ति बढ़ती गई, जनप्रिय सभाओं के प्राधिकार कम होने लगे। मुखिया को प्रशासनिक सहायता देने के लिए अधिकारियों की नियुक्ति की जाती थी और उन्होंने प्रमुख परामर्शदाताओं के रूप में लोकप्रिय सभा के कार्यों को हथिया लिया था।

इस काल के दौरान एक प्रारंभिक सेना की संरचना भी राजनीतिक व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण तत्व था। इन सभी की जीविका लोगों द्वारा दिए जाने वाले एक प्रकार के कर जैसे बलि, 'शुल्क' और 'भाग' पर निर्भर थी।

इस काल में मुखिया क्षत्रिय वर्ण से संबद्ध थे और उन्होंने ब्राह्मणों के सहयोजन से 'धर्म' के नाम पर लोगों पर नियंत्रण करने का प्रयास किया। परन्तु इन सभी तत्वों से यह जानकारी नहीं मिलती कि 'जनपद' या 'प्रादेशिक राज्य' अपनी सभी विशेषताओं, जैसे स्थायी सेना और नौकरशाही की व्यवस्था, का उद्भव उत्तर वैदिक काल में हुआ



परन्तु यह प्रक्रिया छठी सदी ईसा पूर्व के आसपास वैदिक काल के तुरंत बाद शुरू हुई, जब हमें उत्तर भारत में सोलह महाजनपदों के उत्थान की जानकारी मिलती है।



### पाठगत प्रश्न 4.11

1. उत्तर वैदिक काल में मुखिया के पद की प्रकृति का विस्तृत वर्णन करें?
2. उत्तर वैदिक काल के दौरान जनप्रिय सभाओं की शक्तियों में कमी क्यों आ गई थी?
3. राज्याभिषेक संस्कार के क्या-क्या कार्य थे?



### आपने क्या सीखा

हड़प्पा कालीन नगरीकरण के पतन के पश्चात देखने में आया कि भारत के उत्तर-पश्चिमी क्षितिज पर, नए किस्म के लोगों का आगमन दिखाई दिया। ये लोग पशुओं के झुंड रखते थे और दक्षिणी रूस के विभिन्न भागों से निकलकर समूहों में सभी जगह पर फैले थे। ऐसे अनेक लोगों के समूह अलग-अलग समय में अफ़गानिस्तान के मार्ग से भारत में प्रविष्ट हुए। उनकी भाषा, जिसे इंडो-आर्यन अथवा संस्कृत कहा जाता था, स्थानीय भाषाओं से शब्द लेते हुए प्रधान भाषा बन गई थी। उनकी प्राचीनतम रचना थी 'ऋग्वेद' और इसके पश्चात अनेक प्रकार की साहित्यिक रचनाएं लिखी गईं। इन लोगों की सभ्यता के संबंध में हमें इस वैदिक ग्रन्थावली से जानकारी मिलती है। प्रारंभ में आर्य लोग सात नदियों के अपवाह क्षेत्र 'सप्त सिंधु' में रहते थे, जिनका विस्तार आज के पंजाब और हरियाणा प्रदेशों में मिलता है। तत्पश्चात वे लोग गंगा, यमुना, सरयू, घाघरा और गंडक नदियों के बहाव क्षेत्र की ओर अग्रसर हुए जो कि आज के पूर्वी उत्तर-प्रदेश और पश्चिमी बिहार के आधुनिक प्रदेशों में से निकलती हैं।

आर्यन, जो पशु पालने वाले चरवाहे थे, बाद में किसान बन गए थे और जिन्हें लोहे की तकनीक का ज्ञान था, गंगा-यमुना के दोआब क्षेत्र में बड़ी बस्तियां बसाने में कामयाब हो गये थे। पी० जी० डब्ल्यू०, पुरातात्विक साक्ष्यों और उत्तर वैदिक साहित्य में निहित विषयों से हमें यह जानकारी मिलती है। इस परिवर्तन के सिलसिलेवार गहन अध्ययन से जीवन के अन्य क्षेत्रों में हुए परिवर्तन की कड़ी की भी जानकारी मिलती है। प्रारंभिक वैदिक काल में समतावादी, जनजातीय सामाजिक-राजनीतिक व्यवस्था से वैदिक काल के अंतिम काल तक आते-आते आर्य लोगों में क्षेत्रीयता के आधार पर वर्णों में विभाजित सामाजिक व्यवस्था स्थापित हो चुकी थी। जनजातीय मुखियाओं ने वंशगत स्थान ग्रहण कर लिया था और शासकीय कार्मिकों ने लोकप्रिय सभा-समितियों की भूमिका को बलपूर्वक हथिया लिया था। यज्ञों की बढ़ती संख्या से राजाओं और ब्राह्मणों के महत्त्व का पता चलता है। इसी प्रकार जो देवता पहले बहुत महत्त्वपूर्ण



आपकी टिप्पणियाँ

स्थान रखते थे अब अपना महत्त्व खो चुके थे, और उनका स्थान नए देवताओं ने ले लिया था। इन सभी परिवर्तनों के परिणामस्वरूप 'जनपदों' और 'महाजनपदों' का जन्म हुआ जो छठी सदी ईसा पूर्व काल में पहले से बड़े प्रादेशिक राज्य थे।



### पाठान्त प्रश्न

1. आर्य कौन थे? वे कहाँ से आकर सब जगहों पर बस गए?
2. प्रारंभिक वैदिक काल के लोगों के भौगोलिक स्थान के बारे में लिखिए।
3. आर्यों की सभ्यता की मुख्य विशेषताओं का वर्णन करें।
4. उत्तर वैदिक काल के दौरान आर्यों की अर्थव्यवस्था की पद्धतियों में आए परिवर्तनों का उल्लेख करें।
5. लोहे के तकनीकी ज्ञान से कृषि के विस्तार में किस प्रकार सहायता मिली?
6. उत्तर वैदिक काल में महिलाओं पर किस प्रकार के प्रतिबंध लगाए गए थे?
7. उत्तर वैदिक काल में ब्राह्मण कैसे इतने महत्त्वपूर्ण बन गए थे?
8. प्रारंभिक वैदिक काल में जनप्रिय सभाओं के क्या कार्य थे, उनका वर्णन करें?



### पाठगत प्रश्नों के उत्तर

#### 4.1

1. पवित्र ज्ञान
2. ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद
3. आरण्यक और उपनिषद
4. मंत्रों और बलि देने संबंधी धार्मिक अनुष्ठानों की टीका (परिभाषा) संबंधी गद्य-ग्रन्थावली
5. दार्शनिक विचार-विमर्श

#### 4.2

1. इन भाषाओं में, समान ध्वनि और अर्थ वाले शब्द हैं।
2. दक्षिणी साइबेरिया में स्थित एन्ड्रोनोवो सभ्यता।
3. बैक्ट्रिया-मार्जियाना
4. घोड़ों, पहियों, आग की भट्टियाँ, शवदाह के साक्ष्य।

#### 4.3

1. सिंधु, झेलम, चिनाब, रावी, व्यास, सतलुज, सरस्वती





2. उत्तर प्रदेश (कौशल) और उत्तरी बिहार (विदेह)

#### 4.4

1. चरवाहे
2. देखें 4.4 अनुच्छेद 1
3. देखें 4.4 अनुच्छेद 2
4. शिकार, बढईगिरी, प्रशिक्षण, कपड़ा बुनाई, जुआ (द्यूतक्रीड़ा), रथ-निर्माण और धातुओं को गला कर ढलाई
5. गायों के माध्यम से परस्पर वस्तु-विनिमय

#### 4.5

1. कृषि
2. देखें 4.5 अनुच्छेद 2
3. इन्द्र देवता
4. यह पहला वनस्पति तेल था, जिसका बड़े पैमाने पर प्रयोग होता था।
5. घने जंगलों की कटाई के लिए; लोहे के हल से मिट्टी को उपजाऊ बनाने के लिए इसकी जुताई (ऊपर-नीचे) की जा सकती थी।
6. कृषि पर आधारित अर्थव्यवस्था के विस्तार और जनसंख्या में लगातार वृद्धि के कारण।

#### 4.6

1. एक-पत्नी धर्म और बहु-पत्नी धर्म
2. हां, कोई जाति विभाजन नहीं, व्यवसाय जन्म के आधार पर नहीं थे और कोई भी व्यवसाय वर्जित नहीं था।
3. वर्ण या रंग के आधार पर
4. मुखियाओं और पुजारियों के हाथों में, युद्ध में प्राप्त माल (पुरस्कारों) का ज्यादा भाग हाथ लगना।

#### 4.7

1. संयुक्त परिवार
2. एक ही पूर्वज की संतान, एक समान गोत्र के सदस्यों (व्यक्तियों) में विवाह संबंध वर्जित
3. उपनयन संस्कार के अधिकारी नहीं थे (धार्मिक बुराई)
4. 4.7 अंतिम अनुच्छेद



आपकी टिप्पणियाँ

#### 4.8

1. देखें 4.8
2. मौसम का देवता जिसके हाथ में वज्र है।
3. देवताओं के आह्वान और आराधना के लिए
4. क्योंकि वह मार्गों, चरवाहों और पशुओं का देवता था
5. देवों और मानवों के मध्य कड़ी के रूप में था।

#### 4.9

1. ब्राह्मण वर्ण के लोगों के बढ़ते महत्त्व और अपनी श्रेष्ठता बनाए रखने के प्रयासों के कारण।
2. लोगों के ऊपर मुखियाओं द्वारा अपना प्राधिकार स्थापित करने और राजनीति में प्रादेशिक वर्चस्व पुनः स्थापित करने के लिए।
3. दान-दक्षिणा के रूप में धन की अत्यधिक मात्रा ब्राह्मणों को मिलती थी।
4. इससे उनके आर्थिक जीवन पर प्रभाव पड़ रहा था।

#### 4.10

1. जीवन के सभी पक्षों पर विचार के लिए जैसे युद्ध में जीते गए पुरस्कारों के वितरण, न्यायिक और धार्मिक कर्मकाण्ड।
2. जन और पशुधन की शत्रुओं से रक्षा के लिए।
3. साधारण जनजातीय लोगों द्वारा विशेष अवसरों पर दिया जाने वाला स्वैच्छिक योगदान।
4. पुरोहित, सेनानी, कुलाप, ग्रामणी।

#### 4.11

1. यह वंशानुगत बन गया था।
2. क्योंकि मुखिया अधिक शक्तिशाली बन गए थे, प्रशासकीय कामों में मुखिया की सहायता के लिए बनाए गए अधिकारियों ने बलपूर्वक 'जनप्रिय सभाओं' के कार्यों को हथिया लिया था।
3. मुखिया के प्राधिकार स्थापित करने के लिए।

#### पाठान्त प्रश्नों के संकेत

1. देखें 4.2 अनुच्छेद 1 और 2
2. देखें अनुच्छेद 4.3
3. देखें अनुच्छेद 4.2 और 2
4. देखें 4.5



5. देखें 4.5 अनुच्छेद 2
6. देखें 4.7 अनुच्छेद 1
7. देखें 4.11
8. देखें 4.10

### शब्दावली

- पशुपालन** - मूल रूप से पशुपालन और सीमित कृषि कार्यों पर आधारित जीवन पद्धति।
- पितृसत्तात्मक** - परिवार/समाज के पुरुष सदस्य की श्रेष्ठता पर आधारित सामाजिक व्यवस्था।
- एक पत्नी व्रत** - जीवन में किसी भी समय एक पत्नीव्रत का धर्म।
- बहु पत्नी व्रत** - एक समय में एक से अधिक पत्नियां रखने की सामाजिक व्यवस्था।
- गोत्र** - एक ही पूर्वज से उत्पन्न एक वंशावली के परिवारों का समूह जिनके सदस्यों के परस्पर कुछ कर्तव्य होते थे।
- जनजाति** - यह उन समूहों की ओर संकेत करती है, जिनकी एकता रक्त संबंधों के विस्तार यानी प्रादेशिक संगठनों के विस्तार पर नहीं, बल्कि संबंधों के बढ़ने पर निर्भर होती है।
- समतावादी** - ऐसा समाज जिसमें सभी को समानता का अधिकार हो।
- पी.जी.डब्ल्यू** - चित्रित सुरमई बर्तन; इस शब्द का अभिप्राय था उत्तर वैदिक काल में लोहे का प्रयोग करने वाले वे लोग जो समाज के समृद्ध वर्ग के लोगों के लिए इस शब्द का प्रयोग करते थे।